महाबोधि महाविहार का संघर्ष

अतुल मुरलीधर भोसेकर
बौद्ध संस्कृती अभ्यासक

महाबोधि महाविहार का संघर्ष

अतुल मुरलीधर भोसेकर
बौद्ध संस्कृति अभ्यासक

महाबोधि महाविहार का संघर्ष
ISBN: 978-93-341-0113-3

लेखक:
अतुल मुरलीधर भोसेकर
बौद्ध संस्कृति अभ्यासक
९५४५२७७४१०

हिंदी अनुवादक: रजनी पुण्यशील (भोपाल)

१५ अगस्त २०२४
बुद्धाब्द २५६४

मूल्य: रु.१००/-

© सर्वाधिकार लेखक
इस पुस्तिका पूर्णतः ऐतिहासिक और पुरातत्त्वीय साक्ष्य के आधार पर लिखी गई हैं जिसका स्तोत्र विभिन्न इतिहास और पुरातत्त्व ग्रंथों और सरकारी दस्तावेज़ हैं.

मुखपृष्ठ:
उत्तम पाटील

लेआऊट और मुद्रण:
ऐस ग्राफिक्स, पुणे

मित्रों,

महाबोधि महाविहार ये दुनिया का एकमात्र स्थल हैं जहाँ दुनिया के एक अद्भुत महापुरुष, भ.बुद्ध ने कठिन परिश्रम के बाद सम्बोधि प्राप्त की. दुनिया के तमाम बौद्ध और बुद्धविचारोंसे प्रेरित ज्ञानियों का यह पवन श्रद्धास्थल हैं.

"महाबोधि महाविहार का संघर्ष" एक संक्षिप्त पुस्तिका हैं जिसमे बोधगया के महाबोधि महाविहार की ऐतिहासिक और पुरातत्त्वीय साक्ष के साथ उसकी संघर्ष की कहानी हैं.

यह संघर्ष कोई १० - २० साल पुराना नहीं हैं, पुरे १३२ साल से चलें आ रहें न्यायिक अधिकार की मांग हैं. हमारे शास्ता ने दिए हुए शांति के मार्ग से, भारतीय संविधान का आदर करते हुए, हमारा यह संगर्ष जारी हैं.

हम जिसके लिए संघर्ष कर रहें हैं, उस स्थल की पूरी जानकारी होना जरुरी हैं और इसलिए यह पुस्तिका लिखी गई हैं. इसा पूर्व २५० से यानि सम्राट अशोक के काल से लेकर १६वी शताब्दी तक अनेक देश विदेश के महान राजाओंने इस श्रद्धास्थल का बड़े आदर और सन्मान के साथ संवर्धन किया हैं. इस महाविहार के हर शिल्प और शिलालेख इस बात की साक्ष देते हैं.

विश्व के एक महान श्रद्धास्थल का इतिहास इतनी छोटी पुस्तिका में समां नहीं सकता ये मैं जानता हूँ. अपितु इस महान स्थल का उदय, संवर्धन और संघर्ष जानने केलिए यह पुस्तिका पर्याप्त हो सकती हैं ऐसा मेरा विश्वास हैं.

दुनिया के हर धर्मस्थल के अनुशासन केलिए बनी समिति में किसी और धर्म का व्यक्ति शामिल नहीं हो सकता. और यह लाज्मी भी हैं क्यूंकि जहाँ हमारी श्रद्धा हैं उसी पर हम पुरे तन मन के साथ काम करेंगे. मगर यह पुस्तिका पढ़कर आप जान पाओगे की कैसे एक धर्म के स्थल पर किसी और धर्म के व्यक्ति कब्ज़ा कर रहें हैं. यह बौद्धों के प्रति, भारतीय संविधान के तहत बिलकुल नाइंसाफी हैं.

यह पुस्तिका पढ़कर महाबोधि महाविहार के जन आंदोलन के लिए आपको प्रेरित करना यही एकमात्र उद्देश्य हैं. अगर आप विचार और आचरण से बौद्ध हैं या भ.बुद्ध के प्रति आपका आदरभाव हैं तो निश्चित आप इस जन आंदोलन में शामिल होंगे.

मेत्ता,

अतुल मुरलीधर भोसेकर

९५४५२७७४१०

महाबोधि महाविहार का संघर्ष

महापरिनिब्बाण सुत्त में भगवन बुद्ध भन्ते आनन्द से कहते हैं, "हे आनन्द, उपासक ने चार स्थलों को आदरपूर्वक नमन करना चाहिए", ये चार स्थल यानी लुम्बिनी जहां पर बुद्ध का जन्म हुआ, बोधगया जहां उन्हें बोधि प्राप्त हुई, सारनाथ के मृगदाय वन जहां उन्होंने धम्मचक्रप्रवर्तन किया और कुशीनारा जहां महापरिनिर्वाण प्राप्त किया तथा उनके शरीर पर अंतिम संस्कार किये गए.

भ.बुद्ध के विचारोंसे प्रेरित दुनियाभर के भिक्खु-भिक्खुणी, उपासक तथा अभ्यासक इन स्थानों पर अपने श्रद्धासुमन अर्पित करने आते हैं. बिहार राज्य स्थित बोधगया में दुनिया के तमाम बौद्ध तथा बुद्ध विचारोंसे प्रेरित लोग यहाँ पर आते हैं. इसी जगह पर अश्वत्थ की छाया में, परिव्राजक सिद्धार्थने परिश्रमपूर्वक ध्यानमार्ग के जरिए, बोधि प्राप्त कर बुद्ध हुए थे. इसी वृक्ष को बड़े आदरभाव से 'बोधिवृक्ष' कहा गया. चार अरिय सत्य ये अंतिम सत्य हैं और अरिय अष्टांगिक मार्गसे मनुष्य निब्बाण प्राप्त कर सकता हैं इसकी खोज उन्होंने की. इसी मार्गसे चलते मनुष्य दुःखमुक्त हो सकता हैं इस अंतिम सत्य को उन्होंने ढूंढ निकाला. बुद्ध के इस वैज्ञानिक तथ्य को समझते हुए, उनके काल में और उनके महापरिनिर्वाण के बाद भी लाखों लोगोंने बौद्ध धम्म की दीक्षा ली तथा इस आदर्श जीवन प्रणाली को अपनाते आ रहें हैं.

भ.बुद्ध के समय बुद्धगया का नाम उरुवेला था जो निरंजना नदी के तट पर बसा था. अब इस नदी को फाल्गु के नाम से जाना जाता हैं. ईसा.पूर्व 250 के लगभग मोरिय सम्राट अशोक अपने राज्याभिषेक के 11 वे साल में यहाँ के बोधिवृक्ष को वंदन करने आये थे. इस जगह की गरिमा समझ उन्होंने 1,00,000 सुवर्ण कार्षापण दान देकर एक विहार बनाने का आदेश दिया. साथ में बोधिवृक्ष के संरक्षण हेतु दस फिट ऊँची दीवार खड़ी कर दी. बोधिवृक्ष के नीचे जिस स्थान पर सिद्धार्थ को बोधि प्राप्त हुई, वहां पर नक्काशीदार वज्रासन बना दिया. मुख्य विहार के समीप, पूर्वोत्तर दिशा में जहा बुद्ध चंक्रमण करते थे, उस कार्य के स्मृति में सम्राट अशोक ने 22 तराशे हुए पत्थर रख दिए जिस पर धम्मलिपि में अक्षर लिखे हुए थे. ये सभी जानकारी हमें सम्राट अशोक के 8 वे शिलालेख में तथा भरहुत और साँची स्तूप क्र. 1 के तोरण पर दिखाई देता हैं

1861 में सर अलेक्जेंडर कन्निंघमने मेजर मिड को बुद्धगया में उत्खनन करने के आदेश दिए. उत्खनन में मिले प्राचीन शिल्प, सिक्कें, स्तम्भ, शिलालेख के अध्ययन से महाबोधि महाविहार का इतिहास समझने में मदत मिली. उसके बाद 1880 में बंगाल के लेफ्ट गवर्नर सर एशले ईडनने बेग्लर को महाबोधि महाविहार संवर्धन करने का आदेश दिया.

सिंहली भिक्खु बोधरक्षित के शिलालेख से पता चलता हैं की ईसा. पूर्व 100 में बौद्ध भिक्खु चुल्ल तिस्स ने महाबोधि महाविहार को भेंट देकर सादर नमन किया था. वज्रासन के तल पर मिले सोने और चांदी के सिक्कों से पता चलता हैं की राजा कनिष्क के पुत्र, राजा हुविष्काने इस महाविहार का जीर्णोद्धार किया था. यहाँ पर मिले इंडो स्किथियन शिलालेख इस बात की पुष्टि करता हैं.

सम्राट अशोक ने बालुये पत्थर में नाकाशेदार वज्रासन बनाया

राजा कनिष्क के पुत्र राजा हुविष्काने सोना, चांदी, जवाहरात अर्पण किये थे

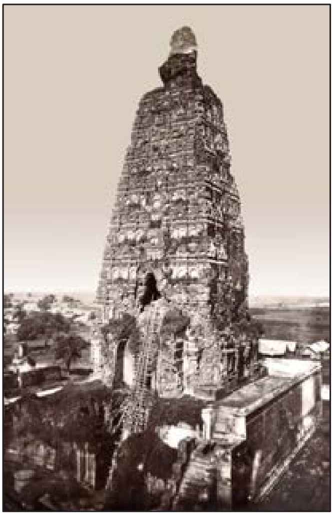

महाबोधि महाविहार का संवर्धन १८८०

संवर्धनपूर्व महाबोधि महाविहार

सन 399-409 में बौद्ध भिक्खु फाह्यान दो बार यहाँ पर आये थे. उन्होंने अपने यात्रा विवरण में इसका विस्तृत वर्णन किया हैं. चौथी शताब्दी के आसपास, श्रीलंका के राजा मेघवन के भाई जब बुद्धगया आए तब उन्हें रहने के लिए सही जगह नहीं मिली. मेघवन को जब इस बात का पता चला तब उन्होंने महाबोधि महाविहार के पूर्वोत्तर दिशा में जगह लेकर महाबोधि संघाराम बनवाया. इसके प्रवेशद्वार पर जो धातुपट्टी लगवाई थी उसपर साफ़ शब्दों में लिखा था "हर व्यक्ति को, बिना किसी शर्त के मदद करना, यह बुद्ध के श्रेष्ठ विचार हैं". इस संघाराम में किसी भी यात्री को मुफ्त प्रवेश था. कालांतर में यह संघाराम एक महत्त्वपूर्ण बौद्ध विश्वविद्यालय बना जिसके शिक्षा का स्तर नालंदा या विक्रमशिला जैसे था. ह्वेनसांग ने इसका वर्णन लिखते हैं की इस संघाराम में छ: बड़े विहार थे, इसके चारों ओर तीन मंजिला सुरक्षा टॉवर थे और पुरे संघाराम को घिरे हुए चालीस फिट ऊँची दीवार थी. विहारों में भ.बुद्ध की सोने, चांदी और जवाहरात से सजी बुद्ध मूर्तियां थी. हुआंग त्सांग के समय वहां पर 1000 भिक्खु अध्ययन करते थे. इस संघाराम का महत्त्व इसी बात से समझ में आता हैं की श्रीलंका जाने के पहले आचार्य बुद्धघोषने यही पर रहकर 'अट्ठसालिनी' और 'ज्ञानोदय' ग्रन्थ लिखा था. चिं हुन, हुआन चाऊ, धर्मपाला (माध्यमाचतु:सटिका के ग्रंथकर्ता) और रत्नवज्रा जैसे महान बौद्ध आचार्य इस संघाराम में रहे चुके थे. यहां पर उत्खनन करते समय कन्निंघम को इस संघाराम का क्षेत्र 2000 फ़ीट लम्बा और 1000 फ़ीट चौड़ा दिखाई दिया और इसकी दीवार 9 फ़ीट चौड़ी थी. यह संघाराम १३वी शताब्दी तक बौद्ध अध्ययन का कार्य करता रहा. बाद में आये राजकीय तथा धार्मिक कारणों से धीरे-धीरे नष्ट होता गया. आज भी इस महान संघाराम के पुरातात्वविक अवशेष दिखाए देते हैं.

सन 600 में राजा शशांक जो बुद्धविचारों का विरोधक था, उसने बोधिवृक्ष तथा महाबोधि महाविहार के बुद्ध मूर्ति तोड़ने का आदेश दिया. उसने बंगाल में स्थित अनेक बौद्ध विहारों तथा स्तूपो को खँडहर में तब्दील कर दिया. बोधिवृक्ष और बुद्ध मूर्ति तोड़ने का आदेश सुनकर, कामरूप राज्य के राजा भास्करवर्मन ने बड़ी शिद्दत और रणनीतिक से अपने वफादार मंत्रियों के सहयोग से द्वारा इसे बचाया तथा सन 620 में बोधिवृक्ष के सुरक्षा के लिए 24 फ़ीट ऊँची दीवार बना दी गई .

सन 637 में ह्वेनसांग ने पहली बार महाबोधि महाविहार की यात्रा की. उनके लेखों से पता चलता हैं की इस महाविहार का प्रवेशद्वार और भव्य मंडप ब्रम्हदेश के राजा साडो ने दान दिया था. ह्वेनसांग आने के पहले निरंजना नदी में बाढ़ आयीं थीं और इस महाविहार में रेत और पानी भर गया था. वज्रासन भी रेत के नीचे दब गया था. महाबोधि महाविहार का वर्णन करते हुए ह्वेनसांग लिखते हैं की यह 170 फ़ीट ऊँचा था और हलके नीले रंग के लाल ईंटो से बनायीं थी. महाविहार के दीवारों पर कई दराज थे और उनमे सोने की परत वाली बुद्ध प्रतिमाएं लगी हुई थी. महाविहार के पूर्वोत्तर दरवाजे पर एक तीन मंजिला मंडप और उसके भीतरी दीवारों पर सोने चांदी में नक्काशी की गई हैं. प्रवेशद्वार के दोनों तरफ बोधिसत्व

अवलोकितेश्वर और मैत्रेय की 10 फ़ीट ऊँची प्रतिमाएं थी. बोधिवृक्ष को घेरे ऊँची दीवार थी. भ.बुद्ध ने बोधि प्राप्त के पश्चात सात सप्ताह जिन स्थलों पर गुजारे थे, वहां हर स्थल पर सम्राट अशोक ने स्मृति स्थल बनाये जो आज भी दिखाई देते हैं. इसके आलावा सम्राट अशोक ने कई जगह पर स्तूप बनवाये जैसी की सुजाता ने जहां भगवान् को खीर दी थी या फिर जहां कश्यप बंधुओं ने भगवन से दीक्षा ग्रहण की थी. ये सारे स्तूप 18 वी शताब्दी तक दिखाई देते थे. बाद में यहां के महंत के अलिखित आदेशनुसार गांव वालों ने इन स्तूपों की ईटे निकालकर खुद के मकान बनवाएं. कन्निंघम को उत्खनन करते समय ढेर सारी बुद्ध प्रतिमाएं मिली.

महाबोधि महाविहार के संवर्धन का काम अनेक राजाओं ने और अज्ञात दानदाताओं ने किया. उस समय महाबोधि महाविहार के संरक्षण हेतु नक्काशीदार दीवार सम्राट अशोक ने बनवाई थी. बाद में कई दानदाताओने उस पर शिलालेख लिखे हैं. एक अज्ञात दानदाता ने महाविहार को 250 दीनार (गुप्तकालीन सोने का सिक्का) तथा दिप जलाने हेतु घी के लिए 300 गायों का दान दिया था. 10वी शताब्दी के पूर्वार्धसे श्रीलंका, चीन और तिब्बत से बौद्ध भिक्खु महाविहार के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित करने आते रहें। एक शिलालेखनुसार 964 में चीन से 300 बौद्ध भिक्खु महाविहार देखने आये थे. चीन सम्राट ताई त्सुंग (976 - 997) ने बोधिवृक्ष के छांव में स्तूप बनवाने के लिए दान दिया था.

महाबोधि महाविहार के उत्तरदिशा सज्जा के तरफ जाने वाली सीढ़ी के बगल में भ.बुद्ध की एक-एक भव्य प्रतिमा बनाई गयी थी. उसके दोनों तरफ बोधिसत्व अवलोकितेश्वर और मैत्रेय के शिल्प बनाये गए थे. उसके नीचे लिखे गए शिलालेख से पता चलता हैं की 10वी शताब्दी में ये प्रतिमाये भिक्खु वीरेन्द्र ने दानस्वरूप दिए थे. 1035 से 1079 तक ब्रम्हदेश के राजाने महाबोधि महाविहार के संवर्धन हेतु काफी दान दिया था.

चीनी भाषा में सबसे प्राचीन शिलालेख मिला जिस पर भ.बुद्ध की सात प्रतिमाएं बनाई गयी हैं. फिलहाल यह पत्थर कोलकाता के राष्ट्रीय संग्रहालय में रखा गया हैं. 1011 में दीपंकर श्रीजना जिन्हे अतिसा के नाम से जाना जाता हैं उनकी दीक्षा इसी महाविहार में हुई थी. यही पर दो साल उन्होंने बौद्ध आचार्य सिलरक्षिता से विनय सीखा था. 11वी शताब्दी में महाबोधि महाविहार का पुनश्च संवर्धन का कार्य करना था उस समय ब्रम्हदेश के राजा किंझीठा (1084 - 1113) ने जहाज भरकर सोना, चांदी, जवाहरात दानस्वरूप भेजे थे. 11वी शताब्दी के शिलालेख से ये पता चलता हैं.

1230 में शिवालिक के राजा अशोकवल्ला ने उनके गुरु पण्डित मुशाला और चट्टोपादि के कहने पर बोधगया में एक विहार बनवाया था. उसी समय कामराज देश के राजा पुरुषोत्तमसिंह ने अपने पोते के स्मृति मे यहाँ एक विहार बनवाया था. इस विहार का निर्माण भिक्खु धर्मरक्षित के मार्गदर्शन में किया गया था. सर कन्निंघम को मिले एक शिलालेख में यह घटना लिखी गई हैं.

यहाँ के इतिहासकारों ने एक बात जनमानस में प्रचलित की है कि - 1199 में मुस्लिम आक्रमण के कारण महाबोधि महाविहार और आसपास के विहारों की संपत्ति लूट ली गई और विहारों को नष्ट किया गया परंतु इस बात के कोई ठोस प्रमाण नहीं मिलते हैं. 1234 में तिब्बती भिक्खु धर्मस्वामिन जब महाबोधि महाविहार देखने आये थे तब उन्हें महाबोधि संघाराम में 300 सिंहली भिक्खु अध्ययन करते दिखाई दिए. एक शिलालेखनुसार 1262 में श्रीलंका के राजा जैसे और उनके पिताजी बुद्धसेन ने महाबोधि महाविहार को दान दिया था. 1298 में ब्रम्हदेश के राजा धर्मसेन और 1471 में राजा धम्मचेतिया ने महाविहार के संवर्धन (जीर्णोद्धार) के लिए दान दिया था. 16वी शताब्दी में भिक्खु बुद्धगुप्त और सिंहली भिक्खु धर्मादिवाकर महाबोधि महाविहार ने कि यात्रा की थीं.

वट संघवाराम, थाईलैंड

बौद्ध राष्ट्रों में महाबोधि महाविहार की प्रतिकृति

बौद्ध राष्ट्रों के तमाम लोग महाबोधि महाविहार का दर्शन करना चाहते थे परंतु ये सब के लिए मुमकिन न था. संसाधनो का आभाव, प्रतिकूल यात्रा परिस्थितियां तथा भारत में उस समय चल रही राजकीय स्थिति यात्रा केलिए अनुकूल न थी. लोगों की श्रद्धा देखकर अनेक बौद्ध राष्ट्रों के राजाओं ने अपने जमीं पर महाबोधि महाविहार की प्रतिकृति स्थापित करने का निर्णय लिया. ब्रम्हदेश के राजा किंझिड्डा ने खास कारागीरों को बोधगया भेजकर, महाबोधि महाविहार का नक्शा बनाया और पगान में महाबोधि की प्रतिकृति स्थापित की. 1452 में तिब्बत में महाबोधि महाविहार के आकर का स्तूप स्थापित किया गया जिसमे उच्च लामा के अस्थि रख दी गई.

1472 में पेगू देश के राजा धम्मचेतिया ने अपने स्थापतियों (वास्तुकार या इंजीनियर) भेजकर नक्शा बनाया और एक भव्य शेवगुगई (स्थानिक भाषा में महाविहार) बनवाया. 1448 में थाईलैंड के राजा तिलोकराजा ने महाबोधि जैसा महाबोधारामा, वाट-जेट-यॉट नाम का एक महाविहार बनवाया. उन्होंने श्रीलंका से बोधिवृक्ष का पौधा लेकर इस प्रांगण में लगाया. उन्होंने महाबोधि महाविहार के सम्पूर्ण परिसर का नक्शा बनाकर वैसे ही प्रतिकृति थाईलैंड के चियांग राई में बनवाई. 16वी शताब्दी में नेपाल के एक उपासकने महाबोधि महाविहार की प्रतिकृति पाटण में बनवाई. 1934 में भूकंप से ये महाविहार नष्ट हुआ और फिर से उसी स्थान पर दुबारा बनवाया गया. 1748 में चीन के उताझू प्रान्त जो पेकिंग शहर से नजदीक हैं वहां पर महाबोधि की प्रतिकृति बनाई गई.

इसी समय प्रतिकूल राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों के कारण, महाबोधि महाविहार मे आने बौद्ध भिक्खुओं और उपासकों कि संख्या में कमी आ गई. दान की कमी के कारण महाबोधि संघाराम भी खाली रहने लगा और जो भी भिक्खु वहां पर अध्ययन कर रहे थे वो भी कुछ समय बाद बोधगया छोड़कर चले गए.

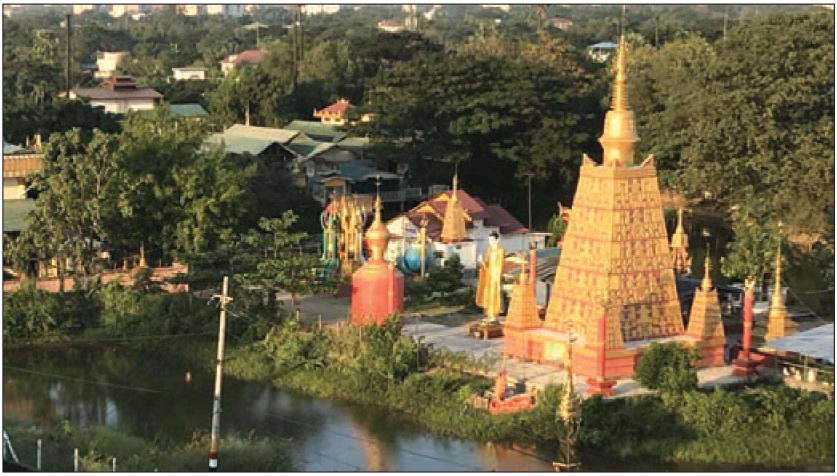

मंडाले, म्यांमार

वज्रासन, चीन

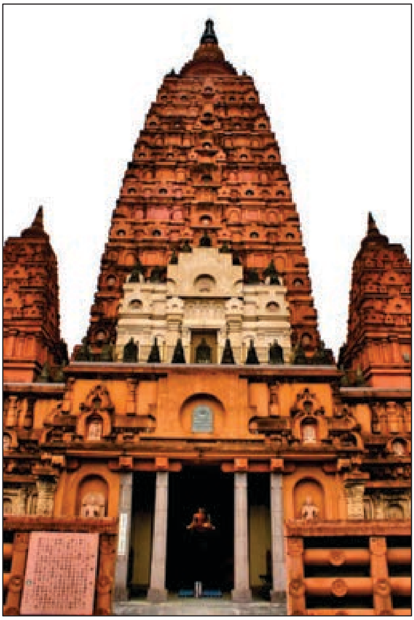

महाबोधि महाविहार प्रतिमा, जापान

पाटन, नेपाल

महाबोधि महाविहार की प्रतिमाओं का दैवतीकरण

17 वी शताब्दी के पूर्वार्ध में शैव पंथ के गोसावी घमंडगिरि बोधगया में आया और महाबोधि महाविहार के प्रांगण में रहने लगा. धीरे-धीरे उसके शिष्य की संख्या बढ़ने लगी और खुद को महंत कहने वाले घमंडगिरि ने महाबोधि संघाराम के परिसर में अपना आश्रम स्थापित किया. महाबोधि महाविहार के अंदर रखी बुद्ध तथा बोधिसत्व की प्रतिमा उसने आश्रम में रखकर उनको देवता की मूर्ति बताकर उनकी पूजा अर्चना शुरू की.

समय के साथ महंत घमंडगिरि अब बहुत ताकतवार हो गया . उसके शिष्य बढ़ते गए और दान दक्षिणा से वो धनवान होने लगा. महाबोधि महाविहार अपनी जागीर समझकर उसको पूरा हड़प लिया. रखरखाव और संवर्धन न होने के कारण महाबोधि महाविहार जर्जर होने लगा. महाविहार के अनेक बुद्ध और बोधिसत्व के शिल्पो को देवी - देवता बनाकर पूजना शुरू किया गया. 1790 में अनेक ब्रिटिश चित्रकार, यात्री, सर्वेक्षक, स्थापति तथा पुरातात्विक बोधगया में महाबोधि महाविहार देखने आने लगे. इनमे सुप्रसिद्ध चित्रकार बंधू विलियम और थॉमस डेनियल थे जिन्होंने महाबोधि महाविहार के चित्र बनवाये थे.

1811 में ब्रिटिश सरकारने फ्रांसिस बुकानन को बिहार प्रान्त तथा बोधगया का सर्वेक्षण करने केलिए बुलाया. बुकानन ने महाबोधि महाविहार का पूरा सर्वे किया परंतु महाबोधि महाविहार का जो विवरण ह्वेनसांग ने अपने यात्रा में लिखा था उसके विपरीत बुकानन ने पाया. महाबोधि महाविहार में अनेक दानदाताओं ने दिए हुए सोना, चांदी, जवाहरात, बेहद सुन्दर नक्काशीदार स्तम्भ, लकड़ी पर कि गई शिल्पकारी सारी अद्भुत चीजें गायब थी. महाविहार की सागौन की लकड़ी के स्तम्भ छत से निकालने के कारण कुछ मंजिले टूटी थी.

सम्राट अशोक द्वारा बनाये गए स्तूपों से ईंटे निकली गई थी. बुकानन ने लिखा हैं कि - महाबोधि महाविहार की सारी अनमोल लकड़ियों और स्तूपों के ईंटो से महंत ने अपना आश्रम बनवाया हैं. अपने शिष्यों के घरों के लिए भी इन्हीं स्तूपों के ईंटो का प्रयोग किया गया था. महाबोधि महाविहार के संरक्षण हेतु जो नक्काशीदार स्तम्भ लगाए थे, उनको उखाड़कर महंत ने महाबोधि महाविहार के परिसर में पांच

पांडव मंदिर स्थापित किया . सम्राट अशोक ने वज्रासन के समीप पत्थर पर बनाया भ.बुद्ध के पदचिन्ह (बुद्धपद) को महंत ने मंदिर में स्थापित किया था और उसे विष्णुपद कहकर आज भी पूजा जा रहा हैं. उसी साल, ब्रिटिश सेना के जेम्स चिचली और जेम्स क्रोकेट ने महाबोधि महाविहार के छायाचित्र निकाले हैं जिससे महाबोधि महाविहार की जर्जर अवस्था सामने आयीं.

1847 में कप्तान मारखम कीटो ने सबसे पहले बोधगया में उत्खनन किया था. उत्खनन में मिले सम्राट अशोक द्वारा बनवाये गए अनेक शिल्पो तथा स्तम्भों को जो उत्खनन में प्राप्त हुए हैं उन्हें भारत के विभिन्न संग्रहालयों में भेजा गया. 1861 में जब सर कन्निंघम ने मेजर मिड को उत्खनन करने का आदेश दिया तब मुख्य महाविहार में मिट्टी-पत्थर का ढेर पड़ा था. बारिश के मौसम में महाविहार के परिसर में कीचड़ जमा था. 1861 में सर रिचर्ड टेम्पेल को बोधगया में खंडित अवस्था में अनेक बुद्धशिल्प यहां - वहां बिखरे हुए थे. 1886 में जब सर एडविन अर्नाल्ड (द लाईट ऑफ़ एशिया के लेखक) ने बोधगया को प्रत्यक्ष देखा तो वे हैरान रह गए. इस देश में भ.बुद्ध के प्रति इतनी असंवेदनशीलता देखकर वो बेचैन हो गए. श्रीलंका लौटने के बाद उन्होंने वहां के लोगों को महाबोधि महाविहार के दुर्दशा के बारे में बताया और महाविहार को पुनश्च संवर्धन करने का सुझाव दिया.

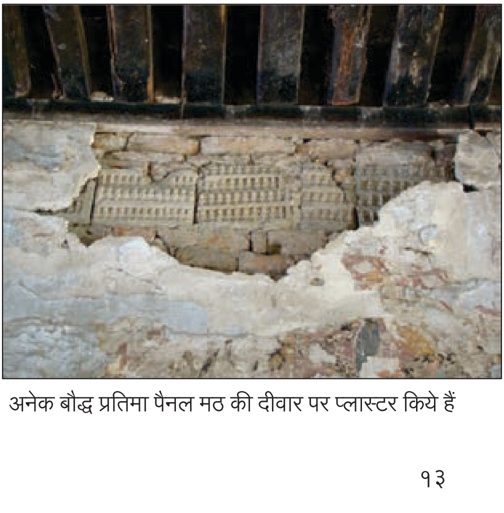

अनेक बौद्ध प्रतिमा पैनल मठ की दीवार पर प्लास्टर किये हैं

अनागारिक धम्मपाल की पहली यात्रा

1891 में जब श्रीलंका के एक नवयुवक धम्मपाल और उनके जापान के मित्र भिक्खु कोझेन गुणरत्न गया से बोधगया की तरफ चल दिए तो रास्ते में उन्हें खंडित बुद्धशिल्प बिखरे हुए दिखाई दिए. उन्हें काफी दुःख पहुंचा. बोधगया में परिस्थिति और भी क्लेशदायक थी.

महाबोधि महाविहार के अनेक शिल्पों को गाँवों कि दीवारों पर चुनवा दिया गया था . कुछ एक बुद्धशिल्प कुएं से पानी निकालने के वज़न के तौर पर रस्सी से बांध दिए गए . महाविहार के नक्काशीदार पत्थर महंत के आश्रम और उनके शिष्य के आंगन पर सजा के रखे थे. महंत के बारादारी में भ.बुद्ध की 3 फ़ीट की प्रतिमा जमीं में गाड़ दी गई . यह सब देखकर धम्मपाल को काफी पीड़ा हुई. जिस महापुरुष ने इस स्थल पर बोधि प्राप्त कर समस्त मनुष्य जाति को दुःखमुक्ति का मार्ग दिखाया उसी के शिल्पों के साथ दुर्व्यवहार देखकर धम्मपाल विचलित हो गए.

धम्मपाल महाबोधि महाविहार में पहुंचे और वज्रासन को वंदन करके प्रतिज्ञा ली कि जब तक महाबोधि महाविहार को महंत से मुक्त कर, बौद्धों के हाथ में नहीं सौंपगे और इस पावन स्थल को पुनश्च गौरांकित करेंगे , तब तक वे अपने घर यानि की श्रीलंका वापिस नहीं लौटेंगे.

धम्मपाल बोधगया में रहकर रोज महाबोधि महाविहार जाने लगे. उनके जापान के मित्र कोझेन गुणरत्नने जापान से 700 साल पुराणी लकड़ी में बनायीं भ.बुद्ध की प्रतिमा भेजी. इस

प्रतिमा को महाविहार में धम्मपाल रखना चाहते थे, मगर अचानक महंत के शिष्य आये और उनको विरोध किया. एक शिष्यने धम्मपाल जी के हाथों से बुद्ध प्रतिमा छीन ली और जमीं पर फेंक दी. उसके बाद शिष्यों ने बहस की और धम्मपाल जी को महाविहार से जबरन बाहर किया. दूसरे दिन धम्मपाल जी को वह प्रतिमा महंत के पांच पांडव मंदिर के आंगन में रखी दिखाई दी. उसी दिन अनागारिक धम्मपाल जी ने महंत के ख़िलाफ़ पुलिस स्टेशन में पहली शिकायत दर्ज की.

एक संघर्ष की शुरुआत

1891से 1893 तक अनागारिक धम्मपाल सात बार महाबोधि महाविहार में गए. इसी काल में वे महाबोधि महाविहार की असलियत के बारे में दुनियाभर के अखबारों में लेख लिखने लगे. समय -समय पर वे राष्ट्रिय मंचों से व्याख्यान भी देते . उन्होंने कई बार महंत गिरी को महाबोधि महाविहार भूमि छोड़ कर जाने की विनती की. वे अपने भाषणों में कहते यह स्थल बौद्धों का हैं और शैव पंथ का इस स्थल से कोई लेना देना नहीं हैं. वे इस बात को कई बार महंत को बता चुके थे. उन्होंने साफ़ शब्दों में कहते कि महंत ने बौद्धों की इस स्थल पर अतिक्रमण किया हैं. जब सारे प्रयत्न विफल हुए तो उन्होंने महंत गिरी को मुँह मांगे दाम देने का सुझाव रखा. लेकिन महंत ने उनके किसी भी प्रस्ताव पर ध्यान नहीं दिया. उल्टा उन्हें सख्त हिदायत दी गई की वे सिर्फ महाविहार में बुद्ध प्रतिमा की पूजा करें और बाकी जगह ध्यान न दे.

अनागारिक धम्मपाल जी ने महाबोधि महाविहार को महंत के नियंत्रण से मुक्त करने और बौद्धों के नियंत्रण में लाने के उद्देश्य से सार्वजनिक ट्रस्ट के निर्माण का सोचा ताकि जल्द से जल्द न्याय मिल सकें . अनागारिक धम्मपाल जी ने श्रीलंका जाकर कर्नल ऑलकॉट के साथ 31 मई 1891 में "द महाबोधि सोसायटी" की स्थापना की. इस ट्रस्ट का मुख्य उद्देश्य था बोधगया के महाबोधि महाविहार को बौद्धों के अधिकार में लाने के लिए न्यायिक संघर्ष करना .

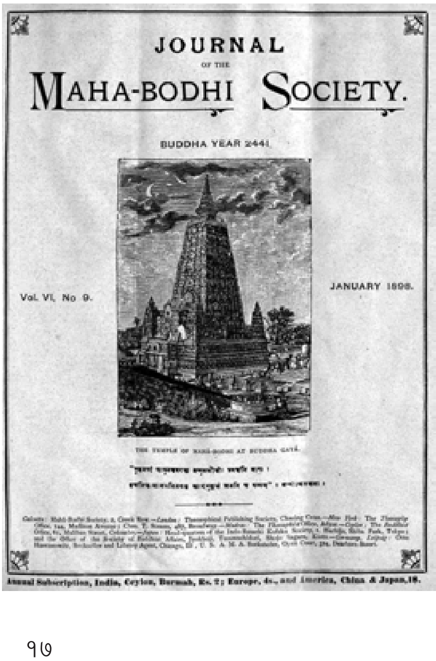

जब बंगाल के लेफ्ट. जनरल सर एशले ईडन बोधगया पधारे तब महंत ने उनसे भेंट की और बताया की महाबोधि महाविहार एक हिन्दू मंदिर हैं. ईडन जब महाबोधि महावीर का मुआयना कर रहें थे तब महंत ने पहले से ही 30-40 आश्रमवासियों को बोधिवृक्ष के नीचे पिंडदान करने को कहा था. ईडन ने सब देख लिया मगर उन्हें महाबोधि महाविहार की पूरी जानकारी थी. इसीलिए उन्होंने इन बातों को दख़लअंदाज कर लिया.

ईडन के इस दौरे का और सारी घटना का वृत्तांकन सर चार्ल्स इलियट ने महाबोधि सोसायटी के जनवरी 1895 के अंक में सविस्तार लिखा हैं.

अनागारिक धम्मपाल के आवाहन पर बौद्ध भिक्खु और श्रामणेर हर सुबह शाम बोधिवृक्ष के पास बुद्ध वंदना और ध्यान करते थे. एक दिन महंत के शिष्योंने उन्हें वहां से जबरदस्तीसे हटा दिया. जब ये सारे बर्मा गेस्ट हाउस पहुंचे तब महंत के शिष्य वहां लाठी-डंडे लेकर पहुंचे और सभी बौद्ध भिक्खुओं को मारने लगे. अनेक भिक्खु गंभीर रूप से घायल हुए. एक भिक्खु को काफी चोटें आयीं और उसे गया के शासकीय अस्पताल में भर्ती करना पड़ा. जब पुलिस वहां पर पहुंची तब उन्हें बर्मा गेस्ट हाउस का फर्श खून से लथपथ मिला. जब अनागारिक धम्मपाल को इस घटना का पता चला तो उन्होंने क़ानूनी कारवाई करने की ठान ली. साथ में उन्होंने दुनिया की कई अखबारों में यह घटना फोटो के साथ भेजी ताकि सभी को इस घटना के बारे में पता चले. महाबोधि सोसायटी की और से पुलिस में शिकायत दर्ज की गई मगर एक दो शिष्य पर कार्यवाही के सिवाय कुछ भी हुआ नहीं हुआ .

इस घटना के बाद भी धम्मपाल जी महाविहार में आते-जाते रहें और सुबह-शाम पूजा करते रहें। 25 फरवरी 1895 में महंत के शिष्यों ने धम्मपाल जी पर हमला कर दिया. धम्मपाल जी को बुरी तरह से पिटा और उन्हें बोधगया छोड़कर जाने के लिए धमकाया गया. चार साल से अधिक समय से शांति से संघर्ष करने के बावजूद और लगातार हो रहें हमलो से चिंतित होकर, धम्मपाल जी ने गया के जिलाधिकारी डी. जे.मैक्फर्सन के समक्ष पिटिशन दर्ज की. तब अनागारिक धम्मपाल जी की उम्र सिर्फ 31 वर्ष थी. धम्मपाल जी ने प्रतिज्ञापूर्वक लिखकर दिया की महाबोधि महाविहार की बुद्ध प्रतिमा को नीचे जमीन पर रखा गया हैं और एक गेरुए रंग की चादर में लपेटा गया हैं और बुद्धप्रतिमा के माथे पर लाल सिंदूर लगाया हैं . बुद्ध प्रतिमा के सर पर फूल रखे हैं. महंतने महाविहार में एक पुजारी नियुक्त किया हैं जो सुबह शाम बुद्ध प्रतिमा के सामने आरती करता हैं. ये सब बुद्ध विचारों के खिलाफ हैं और बौद्ध धम्म ऐसी कोई पूजाअर्चना को मान्यता नहीं देता.

अनागरिक धम्मपाल जी द्वारा दर्ज किए कोर्ट केस की सुनवाई 8 अप्रैल 1895 में शुरू हुई. यह केस लंबा और जटिल था इसलिए लंबा चला. मैक्फर्सन ने केस की सुनवाई के दौरान विभिन्न व्यक्तिओं के बयान और साक्ष्य लिए. इसमेसे कुछ प्रमुख साक्षीदार और साक्ष्य इस प्रकार हैं –

1- बिपिन बिहारी बैनर्जी, महाबोधि महाविहार के मुख्य संरक्षक:

बैनर्जी ने अपने बयान में कहा कि - इस महाविहार में कोई भी हिन्दू कभी भी पूजा नहीं करता था. मैं भी महाविहार के अंदर नहीं जाता क्योंकि मैं हिन्दू हूँ और मेरा धर्म मुझे ऐसा करने कि इजाजत नहीं देता हैं. जब मैं छुट्टी से वापिस आया तब मैंने बुद्ध प्रतिमा को नीचे जमीन पर रखे देखा और मैंने देखा की बुद्ध प्रतिमा को गेरुए रंग की चादर में लपेटा था और माथे पर

लाल सिंदूर (कुंकुम) लगाया गया था और एक ब्राह्मण बुद्ध कि मूर्ति के सामने आरती करते हुए दिखायीं दिया . मेरी छुट्टी से जाने के पहले कभी ऐसा नहीं होता था.

महातली सुमंगला, सिंहली बौद्ध भिक्खु:

मैं उस दिन धम्मपाल जी के साथ महाविहार गया और फिर हम पूजा कर रहें थे तब महंत के शिष्यों ने आकर हमें डराया – धमकाया तब. हमने कोई प्रतिकार नहीं किया परंतु जापान में रहने वाले मेरे मित्र द्वारा भेजी गई प्राचीन बुद्ध प्रतिमा को धम्मपाल जी के हाथों से छीन लिया गया जबकि मूर्ति का सन्मान करना चाहिए था. जब ऐसा मैंने कहा तो महंत के शिष्यों ने धम्मपाल जी पर एकाएक हमला कर दिया .

डॉ. हरी दास चैटर्जी, गया के सरकारी डॉक्टर:

1873 में पहली बार मैंने महाबोधि महाविहार को देखा था. उसके बाद जब उसका संवर्धन हुआ तब भी मैंने उसे देखा. वहां पर केवल बौद्ध लोग और भिक्खु जाते हैं. वे वहां पर मोमबत्ती, धुप और फूल चढ़ाते हैं और पूजा पाठ करते हैं. वहां पर अन्य कोई भी हिन्दू कभी नहीं जाते.

बाबू दुर्गा शंकर भट्टाचार्य, जमींदारः

मैं महाबोधि महाविहार में कई बार जा चुका हूँ. वहां पर जो बुद्ध प्रतिमा हैं वहां केवल बौद्ध लोग जैसे - कपडे, पैसे, श्रम का दान देते हैं. बर्मा के राजा ने महाबोधि महाविहार को जो सोना, चांदी और मूल्यवान वस्तुएं दान में दी थीं वे सारी चीजें अभी के महंत ने खुद के पास कब्जा कर रखी है. उसके शिष्य ने मुझे वो कोठी भी दिखाई जहाँ ये सारे जेवरात रखे हुए हैं.

पंडित गंगाधर शास्त्री, मुख्याध्यापक, जिला विद्यालय, गयाः

महाबोधि महाविहार ये बौद्धों का स्थल हैं, हिन्दुओं का नहीं. मैंने ये महाविहार बाहर से ही देखा हैं क्योंकि मेरा धर्मशास्त्र इसके अंदर जाने की मुझे इजाजत नहीं देता। वहां गया तो मुझे प्रायश्चित करना पड़ेगा।

अपने 102 पन्ने के फैसले में डी. जे. मैक्फर्सन ने जयपाल गिरी, महेंद्र गिरी,

बिमालदेव गिरी और दो लोगों को IPC की धारा 295,296 और 297 के तहत दोषी करार देते हुए प्रत्येक को एक महीना कैद तथा रु.100/- दंड सुनाया. यह मुक़दमा खूब चर्चा का केन्द्र रहा. अदालत में हुई साक्ष्य और प्रतिसाक्ष्य से ये बात सिद्ध हो गई की बोधगया का महाबोधि महाविहार बौद्धों का ही हैं और हिन्दू महंत ने उस पर जबरन गैरकानूनी कब्जा कर लिया हैं. महंत ने इस फैसले के खिलाफ कलकत्ता के उच्च न्यायलय में अपील की जहां पर उसकी सजा को रद्द कर दिया गया. अनागारिक धम्मपाल जी के लिए यह अनेपक्षित था उन्हें बड़ा इस बात का बड़ा सदमा पहुंचा, फिर भी उन्होंने हार नहीं मानी और अपने प्रयत्न जारी रखे.

जब लार्ड कर्जन व्हाइसरॉय बन गए तब बर्मा का एक शिष्टमंडल बोधिवृक्ष और महाबोधि महाविहार को महंत के गैरकानूनी कब्जे से मुक्त कराने की अपील की. उन्होंने यह भी अपील में लिखा की बोधिवृक्ष और पूरा महाविहार का परिसर बौद्धों को सौंपा जाए लार्ड कर्जन ने सहानभूति जताते हुए 1903 में खुद बोधगया का मुआयना करने आये. महंत अपने सारी शिष्य मंडली को लेकर उनसे मिलने आया. लार्ड कर्जन ने उससे पूछा की वो हिन्दू होकर भी बौद्धों के स्थल पर कब्ज़ा क्यों कर बैठा हैं. इस पर महंत ने कह की वो बुद्ध को विष्णु का अवतार समझते हैं. कर्जन साहब ने आश्चर्य व्यक्त करते हुए पूछा की महंत खुद शैव हैं तो वो विष्णु को कैसे मानता है. महंत कुछ बोल नहीं पाया. लार्ड कर्जन को समझ में आया की महंत को बुद्ध से कोई लेना देना नहीं, उसे सिर्फ महाबोधि महाविहार के परिसर अपने कब्जे में रखना हैं. लेकिन राजनैतिक दृष्टिकोणसे अभी कोई निर्णय लेना उन्होंने उचित नहीं समझा.

अनागरिक धम्मपालजी पुनः निराश हुए लेकिन उन्होंने हार नहीं मानी. महाबोधि महाविहार और परिसर को बौद्धों के हाथ सौंपने का शांतिपूर्ण और न्यायिक तरीका ढूंढते रहते. उन्होंने सोचा क्यों न हिन्दुओं को महाबोधि महाविहार की ऐतिहासिक और पुरातात्विक जानकारी देकर उनकी सोच में बदलाव किया जाएं. 1922 में गया में अखिल भारतीय कांग्रेस का अधिवेशन होने जा रहा था. उसमे महाबोधि सोसायटी की तरफ से महाबोधि महाविहार की ऐतिहासिक जानकारी पर एक पुस्तिका वितरित की गयी.

अनागारिक धम्मपाल के किये आवाहन पर महात्मा गाँधी ने कहा था, "इसमें कोई दोराई नहीं की महाबोधि महाविहार बौद्धों को सौंपना चाहिए. अगर उस जगह पर बलि चढ़ाया जा रहा हैं तो तो इसका निषेध हैं और अगर वहां पर (हिन्दू रीतिसे) पूजा अर्चना हो रही हैं जिसे बौद्धों की भावनाओं को ठेस पहुंचा रहा हैं तो ये और भी निषेधपूर्ण हैं"

गुरुवर्य रविंद्रनाथ टैगोर भी महाबोधि महाविहार बौद्धों को देने के पक्ष में थे. उसके लिए आवाहन करते हुए उन्होंने कहा था, "मुझे यकीन हैं की जो सही में हिन्दू धर्म को मानते हैं, वे मानेंगे की जिस जगह भ.बुद्ध ने बोधि प्राप्त की उस जगह पर मंदिर बांधना या उस सम्बोधि जगह को जबरन कब्जे में लेना इसका मतलब वे लोग न बौद्ध मत जानते हैं ना उनके पूजा करने का अधिकार"

इसी अधिवेशन में महाबोधि सोसायटी द्वारा निवेदन दिया गया की महाबोधि महाविहार और उसका सम्पूर्ण परिसर बौद्धों के हाथ सौंपा जाये. बर्मा के प्रतिनिधि मंडल ने भी यह प्रस्ताव रखा. (बर्मा उस वक्त भारत का हिस्सा था). अधिवेशन में इसकी काफी चर्चा हुई और इस प्रस्ताव को मंजूर करते हुए एक समिति का गठन किया गया. इस समिति के अध्यक्ष के रूप में डॉ.राजेंद्र प्रसाद की ताजोपोशी हुई. समिति में और एक विद्वान् सदस्य थे जिनका नाम था स्वामी रामोदर दास जिन्होंने आगे चलकर बौद्ध धम्म अपनाया और राहुल सांकृत्यायन के नाम से प्रसिद्द हुए.

1925 में महाबोधि समिति ने सुझाव दिया की अखिल भारतीय कांग्रेस और हिन्दू महासभा ने एकसाथ मिलकर इस प्रश्न का हल निकालना चाहिए. उसके तहत हिन्दू महासभा के 4000 सदस्यों के परिषद् में अनागारिक धम्मपाल जी ने अपना पक्ष रखा. इस परिषद् में यह प्रस्ताव पारित हुआ की महाबोधि महाविहार के पूजा का सम्पूर्ण अधिकार बौद्धों को दिया जायेगा और महाविहार की समिति बनाकर उसमें बौद्धों को स्थान दिया जायेगा. महंत द्वारा प्रस्ताव को मान्यता न देते हुए ठुकरा दिया गया. अगर देखा जाये तो हिन्दू महासभा और कांग्रेस ने मिलकर यह प्रस्ताव मंजूर किया था और महंत इतना शक्तिशाली बिल्कुल भी नहीं था कि वह इस प्रस्ताव को ठुकरा दे. फिर भी महंत की इस हेकड़ी पर ना कांग्रेस ने कोई सवाल किया न हिन्दू महासभा ने!

धम्मपाल जी ने अनेक दशकों तक भागदौड़ की, महाबोधि महाविहार को बौद्धों को सौंपने के लिए दिन-रात एक कर दिए, लेकिन शरीर की जर्ज़रता के कारण और महाबोधि महाविहार का हल न निकलता देख, अनागारिक धम्मपाल जी काफी अवसादग्रस्त हुए और मानसिक तौर पर विचलित हुए. वे महाबोधि महाविहार के संघर्ष से पीछे हट गए तथा महाबोधि सोसायटी के सचिव और उनके मित्र, देवप्रिय वालीसिंह को यह संघर्ष जारी रखने को कहा. 1933 में अनागारिक धम्मपालजी का निर्वाण हुआ. उन्होंने महाबोधि महाविहार को महंत के चंगुल से मुक्त करने के लिए लेखन, व्याख्यान, अदालत, राजकीय पक्ष अथवा व्यक्ति, देश-विदेश में अलग-अलग समूह के सामने अपनी आवाज को पूरे 42 साल तक बुलंद किया. वे मरते दम तक अकेले महाबोधि महाविहार का संघर्ष करते रहें. दुनिया में यह आज भी अपने आप में एक मिसाल हैं. वो श्रीलंका के नागरिक थे पर लड़ रहें थे भारत के बौद्धों के हक और अधिकार के लिए, बौद्धों के एक महान श्रद्धास्थल के लिए. पहला संघर्ष शुरू होने के 132 साल के बाद भी महाबोधि महाविहार पर बौद्धों का हक - अधिकार नहीं हैं.

अनागारिक धम्मपालजी के बाद महाबोधि महाविहार की स्थिति

अनागारिक धम्मपाल जी के निर्वाण के बाद, उनके द्वारा स्थापित महाबोधि सोसायटी के सदस्य और कार्यकर्ताओं ने भारत और बौद्ध राष्ट्रो के मित्रों के सहयोग से महाबोधि महाविहार मुक्ति का आंदोलन जारी रखा. भारत के कई हिन्दू साथी आंदोलन के साथ जुड़ गए जो चाहते थे की महाबोधि महाविहार बौद्धों को सौंपा दिया जाए. 1935 में हिन्दू महासभा ने कानपूर में एक परिषद् का आयोजन किया. बर्मा के विद्वान भिक्खु ऊ ओट्टम इस परिषद् के अध्यक्ष थे. इस परिषद् में भारत, श्रीलंका और बर्मा के बौद्ध भिक्खुओं का जनसैलाब उमड़ पड़ा. महाबोधि महाविहार में पूजा के अधिकार के साथ समिति में भी बौद्धों का प्रतिनिधित्व होना चाहिए इस मांग पर जोर दिया गया परिषद में उपस्थित बहुसंख्य सदस्यों ने इसको स्वीकृति दी. जब ये प्रस्ताव पारित हो रहा था तब हिन्दू पुरोहितों ने इसका प्रखर विरोध किया तब ये निर्णय लिया गया की 1922 में डॉ. राजेंद्र प्रसाद के अध्यक्षता में जो समिति बनायीं गई थी उस समिति को मदद करने के लिए और एक समिति तैयार की जाए.

6 मार्च 1937 में अखिल भारतीय कांग्रेस के अधिवेशन में डॉ. राजेंद्र प्रसादजी ने महाबोधि महाविहार के सम्बन्ध में एक बिल प्रस्तुत किया और सुझाव दिया की आने वाले समय में जो नया मंत्रिमंडल बनेगा वह इस बिल पर अमल करेगा. भारत के करीबी बौद्ध राष्ट्रों के प्रमुखों ने भी महाबोधि महाविहार की समस्या का हल निकालने के लिए भारत पर दबाव बनाया .

भारत के स्वतंत्रता होते ही महाबोधि सोसयटी ने पटना में बौद्ध और हिन्दू समाज की एक बड़ी सभा आयोजित की. इस बैठक में ये सुनिश्चित हुआ की महाबोधि महाविहार के लिए प्रशासन के माध्यम से हिन्दू और बौद्धों की एक समिति गठित की जाए. महंत तो इसके सख्त खिलाफ था. यह सोचने वाली बात हैं की महंत कभी भी हिन्दू महासभा के विरुद्ध नहीं जा सकता था लेकिन फिर भी वो उनका पुरजोर विरोध करता रहा. अगर कांग्रेस और हिन्दू महासभा चाहती तो महंत को तुरंत उसके गद्दी से हटा सकती थी या उसके खिलाफ कानूनी कार्यवाही भी कर

सकती थी. मगर आश्चर्य हैं की महंत के सामने इतने ताक़तवार संघटना निष्प्रभ क्यों थे?
इसी दौरान अंतर्राष्ट्रीय एशियाई देशों के सम्मेलन में चीन, तिब्बत, बर्मा और श्रीलंका के राष्ट्र प्रमुखों ने भारत के प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू जी को महाबोधि महाविहार का हल निकलने के लिए अपील की. चूंकि भारत के लिए महाबोधि महाविहार को महंत के कब्जे से मुक्त करना राष्ट्रीय प्रतिष्ठा का विषय बन गया था इसलिए नेहरू जी ने भी इस समस्या का हल निकालना उचित समझा क्योंकि वे आसपास के बौद्ध राष्ट्र में भारत के प्रति सद्भावना और आदर स्थापित करना चाहते थे.
अनेक वर्षो के संघर्षो के बाद 1948 में बोधगया मंदिर अधिनियम का प्रारूप तैयार किया गया और जनता के सुझाव के लिए इसे प्रसारित किया गया. इस अधिनियम अनुसार महाबोधि महाविहार के समिति में 4 बौद्ध और 4 हिन्दू सदस्य होंगे. समिति का अध्यक्ष गया कलेक्टर को रखा गया . यह अधिनियम पढ़कर बौद्धों को घोर निराशा हाथ लगी क्योंकि समिति हिन्दु बहुल होने वाली थी. सबसे पीड़ादायक बात यह थी की महाबोधि महाविहार ऐतिहासिक और पुरातत्विक तथ्यों के आधार पर बौद्धस्थल हैं और विश्व के समस्त बौद्धों का श्रद्धास्थल होने के बावजूद उस पर हिन्दुओं का अधिकार होने जा रहा था। फिर भी महाबोधि महाविहार की समिति में बौद्धों का अधिकार होगा ये मानकर इस अधिनियम को लागू करवाया गया और इसका नाम "बोधगया मंदिर अधिनियम 1949 रखा गया.19 जून 1949 में इसे पारित किया गया.
इस अधिनियम को अस्तित्व में आने के लिए चार साल का समय लग गया और आखिर 28 मई 1953 के वैशाख पूर्णिमा के दिन, महंत ने अपने सारे अधिकार नए समिति को सौंप दिए और बोधगया के आसपास की बौद्ध सभ्यता के खोज के लिए 1966 में वृहद योजना तैयार की गई जिसके तहत महाबोधि महाविहार के आसपास की 300 एकड़ जमीं पर उत्खनन किया जाना तय हुआ और इस कार्य केलिए 17 लाख रुपये की निधि का बजट आवंटन किया गया लेकिन अज्ञात कारणों से यह योजना बंद कर दी गई.
1949 के अधिनियम के कारण बौद्धों में निराशा तो थी ही साथ में असंतोष भी था. जो बौद्धों का सबसे महत्वपूर्ण श्रद्धास्थल हैं उस पर ही बौद्धों का अधिकार न था.
1991 में बिहार के मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद यादव चुनकर आये. महाबोधि महाविहार के प्रति उनका गहरा लगाव व आदर था और वे चाहते थे कि समिति महाविहार बौद्धों का होना चाहिए वे इस पक्ष में थे. 1992 में श्री लालू प्रसाद जी बौद्धों के हित में "बोधगया महाविहार अधिनियम" लाना चाहते थे जिसके तहत महाबोधि महाविहार का सम्पूर्ण परिसर और अनुशासन समिति बौद्धों की होने वाली थी. ऐसा नया अधिनियम वे पारित करना चाहते थे लेकिन उस वक्त भारतीय जनता पार्टी ने हिन्दू कट्टरवादियों के साथ मिलकर इस अधिनियम का पुरजोर विरोध किया और महाबोधि महाविहार को हिन्दू अस्मिता का प्रश्न बना दिया. भारतीय जनता पार्टी की विरोधी मानसिकता और भूमिका के कारण बिहार का

राजनैतिक वातावरण में उथल-पुथल मच गई और दुनिया में बोधि और शांति का प्रतीक समझा जाने वाला महाबोधि महाविहार परिसर एक गंदे राजनीती का केंद्र बन गया.
वास्तविक स्थिति में देखा जाए तो दुनिया के किसी भी धर्म या पंथ के श्रद्धास्थल के समिति पर किसी अन्य धर्म का व्यक्ति स्थापित नहीं है, फिर ये कैसी विडम्बना हैं की महाबोधि महाविहार एक प्रमाणित बौद्धस्थल होने के बावजूद इस पर हिन्दुओं का अधिकार हैं?
जून 2002 में यूनेस्को ने विश्व धरोहर समिति ने महाबोधि महाविहार को विश्व धरोहर घोषित कर दिया. महाबोधि महाविहार को गौरवांकित करते हुए यूनेस्को लिखते हैं -महाबोधि महाविहार का सम्बन्ध भ.बुद्ध के जीवन से जुड़ा है. इसी स्थल पर उन्होंने मनुष्य के दुःख निवारण का मार्ग खोजा और उन्हें बोधि प्राप्त हुई. ये महाविहार विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह भारतीय उपखण्ड के सबसे प्राचीन बनाई गई वास्तु शिल्प में से एक हैं.
जब विश्व ये मानकर चल रहा है की महाबोधि महाविहार एक महत्वपूर्ण बौद्धस्थल हैं फिर भी इस स्थल पर बौद्धों का अधिकार क्यों नहीं?
२०१२ में एडवोकेट विनीत ढांडा ने शीर्ष अदालत में जनहित याचिका दाखिल की जिसमे महाबोधि महाविहार अधिनियम १९४९ की धरा ३ की वैधता को चुनौती दी गई थी जिसके तहत सरकार ९ सदस्य पैनल की नियुक्ति करती हैं, जिसका अध्यक्ष कोई हिन्दू होता हैं और

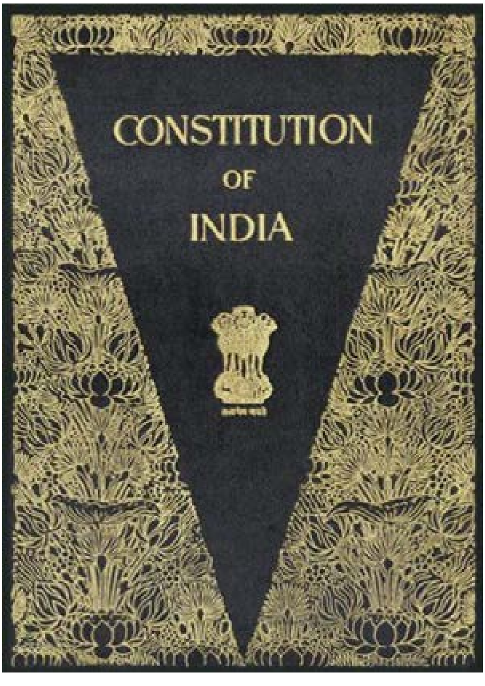

अधिकांश सदस्य बौद्धों के बजाय हिन्दू होते हैं. इसपर सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र और बिहार सरकार से इस बात पर जवाब देने केलिए चार सप्ताह का समय दिया था. आज तक न केंद्र ने कोई जवाब दिया न बिहार सरकार ने.
भारतीय संविधान प्रत्येक भारतीय को अपने विचार रखने की तथा उसे प्रसारित करने का और अपने श्रद्धा तथा धर्म धारण करने की स्वतंत्रता देता है. हमारा संविधान धर्म निरपेक्षता को मानता हैं यानि की प्रत्येक धर्म के लिए हम सभी ने समतावादी रहना चाहिए, लेकिन क्या इस देश के राजनितिक दाल धर्मनिरपेक्षता मानती है?

बोधगया मंदिर अधिनियम और भारत के विभिन्न मंदिरों के अधिनियम में फरक क्यों हैं?

बोधगया महाविहार और उसके संपत्तियों के प्रबंधन के लिए यह अधिनियम 6 जुलाई 1949 से लागू हुआ है. किसी भी अधिनियम में उसकी प्रस्तावना महत्त्वपूर्ण होती हैं. मात्र बोधगया अधिनियम में कही पर भी भ. बुद्ध, बौद्ध धम्म अथवा महाबोधि महाविहार से सम्बंधित ऐतिहासिक या पुरातत्विक या सांस्कृतिक जानकारी नहीं दी गई है. इस महाविहार को महाविहार न कहकर हर जगह मंदिर कहना इस अधिनियम बनाने वालों की उच्च मानसिकता तथा बौद्ध धर्म के प्रति द्वेष दिखलाता हैं .

अधिनियम क्र.3 के अनुसार समिति में 9 सदस्य होंगे जिनमें चार बौद्ध, चार हिन्दू होंगे जिसमे महंत शामिल है. खास बात यह हैं की महंत सिर्फ शैव पंथ का ही हो और समिति का अध्यक्ष जिला मजिस्ट्रेट रहेंगे. बशर्ते वे हिन्दू हो अगर मजिस्ट्रेट हिन्दू नहीं हैं तो किसी अन्य सरकारी हिन्दू अफसर को अध्यक्ष बनाया जाना चाहिए इसका सीधा मतलब यह हुआ की समिति में अधिकांश सदस्य हिन्दू ही होंगे. 13 अगस्त 2013 में बिहार सरकार को अचानक याद आयीं की भारतीय संविधान धर्म निरपेक्षता को मानती हैं और कोई भी भारतीय सरकारी संस्था धर्म निरपेक्ष होनी चाहिए, इसलिए उन्होंने इस नियम को हटा दिया.

पुरी - ओडिशा का जगन्नाथ मंदिर अधिनियम 1955 की प्रस्तावना में इस मंदिर के श्रेष्ठ हिन्दू परंपरा के बारे में लिखा हैं. इस अधिनियम धारा ६ (२) में स्पष्ट लिखा हैं की इस मंदिर के सभी सदस्य हिन्दू होंगे. धारा ६ (३) में स्पष्ट लिखा है की अगर सरकारी अफसर गैर हिन्दू हैं तो उस जगह कोई और हिन्दू अफसर नियुक्त किया जाएं. धारा ७ (१) के उपनियम 1 अनुसार समिति का स्थायी अध्यक्ष पुरी के राजा होंगे. अगर राजा नाबालिग हैं या विकलांग या मानसिक रूप से कमजोर है तो अध्यक्ष कोई और व्यक्ति नियुक्त करें जो हिन्दू हो. इसका मतलब श्री जगन्नाथ मंदिर के सभी सदस्य केवल हिन्दू होंगे और कोई और नहीं. गौर करने वाली बात हैं की श्री जगन्नाथ मंदिर का अधिनियम, महाबोधि महाविहार के अधिनियम के छह साल बाद बना हैं!

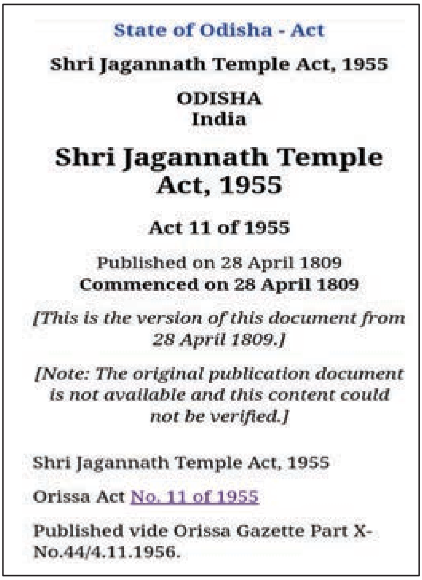
State of Odisha - Act

Shri Jagannath Temple Act, 1955

ODISHA
India

Shri Jagannath Temple Act, 1955

Act 11 of 1955

Published on 28 April 1809
Commenced on 28 April 1809

[This is the version of this document from 28 April 1809.]

[Note: The original publication document is not available and this content could not be verified.]

Shri Jagannath Temple Act, 1955

Orissa Act No. 11 of 1955

Published vide Orissa Gazette Part X-No.44/4.11.1956.

राजस्थान का प्रसिद्द श्री **सांवलियाजी मंदिर का अधिनियम 1991** में पारित व उसके धारा ६ (२) (अ) और (ब) में स्पष्ट लिखा हैं की सरकार की तरफ से जो आठ सदस्य नियुक्त होंगे उसमें पांच सदस्य हिन्दू होंगे और वे भी वैष्णव पंथ के. इसका मतलब श्री सांवलियाजी मंदिर के सदस्य हिन्दू बहुल होंगे.

उत्तर प्रदेश **श्री काशी विश्वनाथ मंदिर अधिनियम 1983**, 28 जनवरी 1983 में प्रवृत्त हुआ. इसके धारा ३ में स्पष्ट लिखा हैं कार्यपालक समिति का सदस्य, मुख्य अधिकारी या मंदिर का कर्मचारी केवल हिन्दू होंगे और अगर कोई भी उपरोक्त व्यक्ति अगर हिन्दू न रह जाय तब उसे उस पद पर रहना का कोई हक़ नहीं. धारा १९(२) और (३) के अनुसार अगर कोई राज्य सरकार का नियुक्त अधिकारी हिन्दू न हो तो उस पद के निकटतम हिन्दू व्यक्ति को समिति में लिया जायेगा. इसका मतलब ये हुआ की सरकारी अफसर चाहे कितना भी बड़ा हो, अगर काशी विश्वनाथ के समिति में जाना हो तो यह हिन्दू ही होना चाहिए अन्य धर्म का नहीं! श्री काशी विश्वनाथ मंदिर अधिनियम, महाबोधि महाविहार के अधिनियम के चौतींस साल बाद बना हैं.

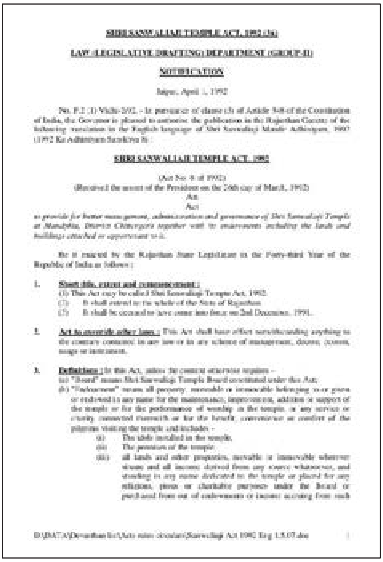
SHRI SANWALIAJI TEMPLE ACT, 1992

LAW (LEGISLATIVE DRAFTING) DEPARTMENT (GROUP-II)

NOTIFICATION

Jaipur, April 1, 1992

SHRI SANWALIAJI TEMPLE ACT, 1992

दिल्ली सिख गुरुद्वारा अधिनियम 1971 के धारा ३ के अनुसार समिति के सारे सदस्य सिख धर्म के होंगे. सिख की व्याख्या करते हुआ कहा गया हैं की ऐसी व्यक्ति जो सिख धर्म को मानता हैं, केवल श्री गुरु ग्रन्थ साहब तथा दस गुरुओं के उपदेश में विश्वास रखता हैं और उसका अनुसरण करता हैं और उसका कोई अन्य धर्म नहीं है. ये बात सदस्यों ने शपथ पत्र पर लिखकर देना हैं.

महाराष्ट्र के प्रसिद्ध विठ्ठल मंदिर का "**पंढरपुर मंदिर अधिनियम 1973**" के धारा १२ में स्पष्ट किया हैं की जो सदस्य समिति केलिए नियुक्त होंगे उन्होंने शपथ पत्र देना अनिवार्य हैं जिसमे लिखा होगा की वो व्यक्ति विठ्ठल और रखुमाई का निस्सीम भक्त हैं.

THE UTTAR PRADESH SRI KASHI VISHWANATH TEMPLE ACT, 1983

ACT

CHAPTER I

Preliminary

(2) It shall be deemed to have come into force on January 28, 1983.

इसी अधिनियम के धारा 22 (ह) में स्पष्ट किया हैं की जो सदस्य गैर हिन्दू हैं उनका सदसत्व रद्द किया जायेगा इसी अधिनियम के धारा 34 (1) के अनुसार सरकार के तरफ से जो कार्यकारी अधिकारी नियुक्त होगा उसने शपथ पत्र पर लिखकर देना होगा की वो हिन्दू हैं और विठ्ठल रखुमाई का निस्सीम भक्त हैं.

महाराष्ट्र का एक और प्रसिद्ध शनि शिंगणापुर मंदिर हैं जिसका **श्री शनेश्वर देवस्थान ट्रस्ट (शिंगणापुर) अधिनियम 2018** में पारित हुआ.

इसके अधिनियम की धारा ८ (१) (ब) अनुसार जिस व्यक्ति को देवस्थान ट्रस्ट का सदस्य होना हैं उस व्यक्ति ने शपथ पत्र देना आवश्यक हैं जिसमें लिखा होगा की वे श्री शैनेश्वर के परम भक्त है.

ऊपर दिए कुछ उदाहरणों से यह साबित होता हैं की हर धर्म के श्रद्धास्थल या धर्म के स्थल के लिए जो भी समिति बनाई जाती हैं उनके सारे सदस्य केवल उसी धर्म के होते हैं, किसी अन्य धर्म के नहीं होते. विडम्बना यह हैं की जो सरकारी अधिकारी नियुक्त होते हैं वे तो हिन्दू होने चाहिए साथ में उन्होंने उस भगवाव के परम भक्त होने का शपथ पत्र भी देना जरुरी हैं!

तो फिर महाबोधि महाविहार पर जो सरकारी अधिकारी नियुक्ति होते हैं वे बौद्ध क्यों नहीं हैं? क्या इस देश का कानून हिन्दुओं को अलग और बौद्धों केलिए अलग हैं? क्या बौद्ध इस देश के नागरिक नहीं हैं? क्या बौद्धों को अपने धर्म का प्रचार, प्रसार और संस्थान चलने का अधिकार नहीं हैं?

आईये, बौद्धों के साथ इस अधिनियम द्वारा जो धार्मिक भेद किया जा रहा हैं, उसको समझे...

बोधगया मंदिर अधिनियम की धारा १० 1 (डी) (समिति के कर्त्तव्य) में लिखा है- "मंदिर में विधिवत पूजा अर्चना करना और मंदिर की भूमि पर पिंडदान करना." बुद्धविचार के एकदम विपरीत मत हैं क्योंकि बौद्ध धम्म कोई भी अतार्किक और अंधविश्वास को मान्यता नहीं देता. इस बात में कोई दोराह नहीं की जानबूझकर हिन्दू धर्म के विचार बौद्ध स्थल पर थोपे किये जा रहे हैं.

बोधगया मंदिर अधिनियम की धारा ८ (१) और (२) में लिखा हैं "मंदिर की कोई भी चल-अचल संपत्ति न गिरवी रखा जायेगा, न हस्तांतरित किया जायेगा और न बेचा जायेगा, मगर अचल संपत्ति को तीन साल के लिए पट्टे पर दिया जा सकता हैं." इसी अधिनियम की धारा १३ में स्पष्ट रूप से लिखा हैं "समिति को शैव मठ के अचल संपत्ति पर कोई अधिकारिता नहीं होगी"

इसका मतलब अवैध तरीके से महाबोधि महाविहार परिसर पर अतिक्रमण करने वाले महंत की संपत्ति पर किसी का अधिकार नहीं और जिसकी मूल जमीन हैं उसे पट्टे पर दिया जा सकता हैं. समिति हिन्दुबाहुल्य होने के कारण, वो अगर निर्णय लेती है तो महाबोधि महाविहार की अचल संपत्ति तीन साल केलिए पट्टे पर दे सकती हैं और महंत जिसने अतिक्रमण किया है, उसकी अचल संपत्ति पर समिति की कोई मालकियत नहीं होगा! **कितना हास्यास्पद अधिनियम बनाया हैं महाबोधि महाविहार का!**

भारतीय संविधान अनुच्छेद 25 से 28 अनुसार सभी नागरिकों को अंतःकरण की स्वतंत्रता, धर्म को मानने, आचरण करने और प्रचार करने की गारंटी देता है. किसी भी धार्मिक समूह को धार्मिक एवं धर्मार्थ उद्देश्यों के लिए संस्थाएं बनाना और बनाये रखने का अधिकार प्राप्त हैं. चल- अचल संपत्ति अर्जित करने का अधिकार और ऐसी संपत्ति को कानून के अनुसार प्रशासन करने का अधिकार हैं.

क्या बोधगया अधिनियम १९४९, भारतीय संविधान के तत्त्वों पर आधारित हैं?

महाबोधि महाविहार बौद्धों का सम्पूर्ण अधिकार होना चाहिए इस बात को लेकर १९९२ में भंते आर्य नागार्जुन सुरई ससाई और भंते आनंद महाथेरो ने "अखिल भारतीय महाबोधि महाविहार कमिटी" द्वारा शांतिसे आंदोलन शुरू किया. पुरे विश्वसे इस आंदोलन को समर्थन मिला मगर बिहार सरकार और केंद्र सरकार ने इस आंदोलन को अनदेखी की.

जुलाई २००२ में भंते प्रज्ञाशील ने संयुक्त राष्ट्र संघ के उच्च आयुक्त मेरी रॉबिन्सन को पत्र लिखकर अंतराष्ट्रीय स्तर पर आवाज उठाने की कोशिश की.

३० मार्च २००५ में राष्ट्रिय अल्पसंख्यांक आयोग ने स्पष्ट आदेश दिए - "बोधगया मंदिर अधिनियम १९४९" यह भारतीय संविधान के अनुच्छेद २६ के विपरीत हैं, न्यायिक तरीकेसे महाबोधि महाविहार की मौजदा समिति हटाकर, सम्पूर्ण परिसर और महाबोधि महाविहार पर सिर्फ बौद्धों की समिति सुनिश्चित किया जाए". इस आदेश पर केंद्रीय सामाजिक न्याय मंत्रलयाने कुछ भी टिपण्णी या कारवाई नहीं की.

२०१२ में एडवोकेट विनीत ढांडा ने शीर्ष अदालत में जनहित याचिका दाखिल किया था जिसमे महाबोधि महाविहार अधिनियम १९४९ की धारा ३ की वैधता को चुनौती दी गई थी जिसके तहत सरकार ९ सदस्य पैनल की नियुक्ति करती हैं, जिसका अध्यक्ष कोई हिन्दू होता हैं और अधिकांश सदस्य बौद्धों के बजाय हिन्दू होते हैं. इसपर सुप्रीम कोर्ट ने केंद्र और बिहार सरकार से इस बात पर जवाब देने केलिए चार सप्ताह का समय दिया था. आज तक न केंद्र ने कोई जवाब दिया न बिहार सरकार ने.

भारत में या दुनिया में कही भी, किसी भी धर्मस्थल के समिति पर किसी अन्य धर्म की व्यक्ति को सदस्य नहीं किया जाता हैं. अपितु अधिनियम में ऐसा नियम किया जाता हैं की उस धार्मिक संसथान के समिति में सिर्फ उसी धर्म के व्यक्ति हो. फिर महाबोधि महाविहार समिति पर क्यों हिन्दुओं को स्थान दिया जा रहा हैं? क्या यह बौद्धों के स्वतंत्रता का उल्लंघन नहीं हैं?

क्या महाबोधि महाविहार का अधिनियम नहीं बदला जा सकता हैं?

परिस्थितिनुसार कई धार्मिक स्थल के अधिनियम बदल जा चुके हैं. महाराष्ट्र के "पंढरपुर मंदिर अधिनियम १९७३" में बदलाव लाया गया हैं.

पंढरपुर के इस प्रसिद्व मंदिर में यहाँ के बड़वे, उत्पात, सेवाधारी, कोली, सेवाधारी, बेणारी, डांगे, डिंगरे, दिवटे, हरदास, क्षेत्रोपाध्य, पुजारी और परिचारक इनकी बहुत ज्यादा मनमानी चल रही थी. देवस्थान का खजाना इनके हाथ में था और उनके हेकड़ीसे सब भक्तों त्रस्त थे. सुबह से लेकर रात तक के सारे पूजा विधि इन्ही के हाथों में थी. इसलिए महाराष्ट्र सरकारने इस अधिनियम को बदलकर आदेश दिया की ये सभी को उत्तरधिकारी के रूप में जो अधिकार प्राप्त थे वे सारे अधिकार रद्द किये जाते हैं और मंदिर के व्यवस्थापन केलिए नई समिति नियुक्त की जाती हैं.

महाराष्ट्र के और एक मंदिर, श्री शनेश्वर देवस्थान ट्रस्ट (शिंगणापुर) में प्रशासन का अभाव हुआ और बहुत सारी शिकायतें आई तो सरकार ने आदेश दिया की वर्त्तमान समिति को बर्खास्त किया जाता हैं और मंदिर के व्यवस्थापन केलिए नए नियम और नई समिति का गठन किया जाय.

उप्पर दिए कुछ उदाहरणोंसे पता चलता हैं की हर धर्मस्थल की समिति अपने ही धर्म के सदस्य चुन लेती हैं. यहाँ तक की सरकारी अफसरों की समिति में नियुक्ति होने केलिए धर्म के प्रति श्रद्धा का प्रतिज्ञापत्र लिखवाकर लेते हैं, हर धर्मस्थल अपने ही धर्म का प्रचार प्रसार करते हैं. भारतीय कानून के तहत कोई भी धर्मस्थल पर किसी और धर्म के लोग अतिक्रमण नहीं कर सकते. किसी भी धर्म का व्यक्ति किसी और के धर्मस्थल पर जाकर उसके खुद के धर्म की पूजा वहां नहीं कर सकता हैं.

इसमें गैर कुछ भी नहीं. भारतीय संविधान हर भारतीय नागरिक को अपने धर्म का प्रचार, प्रसार एवं आचरण करनेका अधिकार प्रदान करता हैं.

महत्त्वपूर्ण यह हैं की जब ऐतिहासिक और पुरातत्त्वीय आधार पर महाबोधि महाविहार बौद्धों का स्थल हैं तब यह लाज्मी की महाविहार की समिति भी बौद्धों की होनी चाहिए. यह स्थल किसी भी प्रकार से हिन्दुओं का मूल स्थल था ही नहीं. फिर भी हिन्दु महाबोधि महाविहार पर कब्ज़ा कर बैठें हैं. महाबोधि महाविहार के परिसर और समिति में हिन्दुओं का क्या काम हैं? जब बाकि के मंदिरों के अधिनियम बदल सकते हैं तो महाबोधि महाविहार का अधिनियम क्यों नहीं बदल सकता हैं?

पिछले १३२ सालसे महाबोधि महाविहार का संघर्ष जारी हैं. पिछले साठ सालों में कोई अपवाद छोड़कर किसी भी राजकीय पक्ष के किसी भी नेता ने महाबोधि महाविहार की समस्या पर प्रश्न नहीं उठाया. यहाँ तक की भ.बुद्ध और डॉ. बाबासाहब आंबेडकर को मानने वाले नेता भी इस बात पर चुप्पी सादे हुए हैं. भारतीय संविधान को छातीसे लगाकर जोरशोरसे प्रचार करने वाले भी इस समस्या पर क्यों नहीं बोलते हैं? खुद को बौद्ध, अम्बेडकरवादी कहने वाले विद्वान प्राध्यापक, डॉक्टर, पत्रकार, लेखकों के कलम क्यों नहीं इस विषय पर लिख पाते? ऐसी कौनसी मज़बूरी हैं?

मित्रों, यह जानकारी महाबोधि महाविहार का सम्पूर्ण इतिहास और असलियत बताने केलिए संक्षिप्त में लिखी गई हैं. महाबोधि महाविहार मुक्ति आंदोलन अब लोगोंने आपने हाथ में लेना चाहिए. महाबोधि महाविहार हमारे अस्मिता और अस्तित्व का प्रश्न हैं. अब नहीं जागोगे तो कब?

अतुल मुरलीधर भोसेकर
बौद्ध संस्कृति अभ्यासक
९५४५२७७४१०

मठ के वरांडा में रखी प्राचीन बौद्ध शिल्प

महंत की गद्दी. पीछे दीवार पर बोधिसत्व की मूर्तियां

मठ के दीवार पे प्लास्टर की गई बुद्ध की प्रतिमा

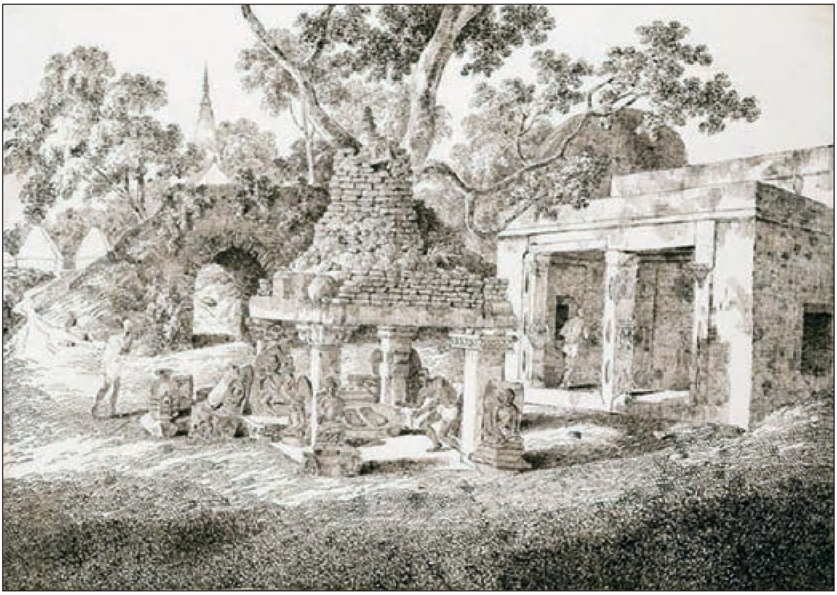

बुकानन को उत्खनन में मिली बुद्धपद शिल्प जो फिलहाल पांच पांडव मंदिर में स्थित हैं

सन्दर्भ:

• Barua Benimadhabh: Gaya and Buddhagaya; Indian Research Institute Publication, 1934
• Cunningham Alexander: Four Reports Made During the Years 1862-63-64, Vol.1
• Cunningham Alexander: Mahabodhi or The Great Buddha Temple Under the Bodhi Tree at Bodhgaya; 1892
• Dhammapal Anagarika: My Life Story, Sarasavi Publishers, reprint 2013
• Dhammapal Anagarika: The Bodh-Gaya Temple Case: H. Dharmapala versus Jaipal Giri and others, 1895
• Mitra Rajendralal: Buddhagaya - The Hermitage of Sakya Muni; 1878
• Shravasti Dhammika: Middle Land, Middle Way: A Pilgrim’s Guide to Buddha’s India
• Shri Sanwaliaji Temple Act; 1992, Rajasthan Gazette
• The Pandharpur Temples Act, 1973; Govt. of Maharashtra, 1974
• उत्तर प्रदेश श्री काशी विश्वनाथ मंदिर अधिनियम १९८३; उत्तर प्रदेश सरकार, १३ अक्टूबर
• दिल्ली सिख गुरुद्वारा अधिनियम, १९७१; ३० दिसम्बर १९७१
• बोधगया मंदिर अधिनियम १९४९; बिहार राज्य सरकार, १ जनवरी १९४९
• श्री शैनेश्वरदेवस्थान ट्रस्ट (शिंगणापुर), २०१८; महाराष्ट्र राज्य

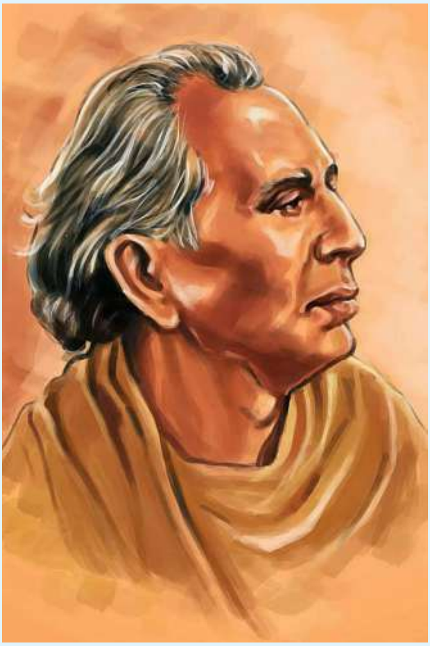

१८९२ में अनागारिक धम्मापलजी ने शुरू किया हुआ संघर्ष आज १३२ साल के बाद भी जारी हैं.

जिस स्थल पर सिद्धार्थ ने संबोधी प्राप्त कर 'बुद्ध' बने, विश्व के बौद्धों का श्रद्धास्थल-महाबोधी महाविहार पर आज भी बौद्धों का अधिकार नहीं हैं.

भ. बुद्ध के विचारों से प्रभावित एक विदेशी नवयुवक भारत में आकर महाबोधी महाविहार को महंत के चंगुल से मुक्त कराने की प्रतिज्ञा लेता हैं और आखरी सांस तक, पूरे ४२ साल संघर्ष करता हैं, ये अपनेआप में दुनिया की अनोखी मिसाल हैं. आपका कार्य सभी को महाबोधी महाविहार के मुक्ति संग्राम को प्रेरित करें...

ISBN 978-933410113-3